INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 12 | ISSUE - 7 | AUGUST - 2022

अमृतलाल नागर के भूख (महाकाल) उपन्यास में जन चेतना का अध्ययन

निर्मला साहू[1] & डॉ. उर्मिला वर्मा[2]
[1]शोधार्थी हिन्दी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.).
[2]प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.).

सारांश –

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, साहित्यकार भी समाज के घात–प्रतिघातों को झेलता हुआ सामाजिक परिदृश्य उपस्थित करता है। वह सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत सामाजिक मूल्यों का सृजन तथा रूढ़ियों का विघटन और परिवर्तन देखता हुआ उसे अपनी लेखनी से शब्दबद्ध करता है। सामाजिक उपन्यास भी मनुष्य की सामाजिक, समसामयिक गतिविधियों का अंकन करता है। इन उपन्यासों के पात्र व्यष्टि के रूप में दिशा निर्देश नहीं करते वरन् समष्टि के परिचायक होते हैं। अमृतलाल नागर जी का समग्र लेखन व्यक्ति और समाज–हित में संतुलन स्थापित करता है। उनकी स्पष्ट धारणा है कि व्यक्ति और समाज गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न है। नागरजी का यही चिन्तन–सार उनके समूचे कथा–साहित्य में अभिव्यक्त हुआ है। आधुनिक शिक्षा और तत्प्रसूत व्यक्तिवादिता के संदर्भ में व्यक्ति और समाज संबंधी उनके चिन्तन की उपादेयता और बढ़ जाती है।

मुख्य शब्द – अमृतलाल नागर, भूख, उपन्यास एवं जन चेतना ।

प्रस्तावना –

औद्योगिक क्रांति के प्रादुर्भाव तथा पूँजीवादी व्यवस्था के साथ–साथ मध्यवर्ग का उद्‌भव एवं तीव्र गति से विकास हुआ। अपने बहुआयामी विस्तार तथा जटिल समस्याओं के कारण ही यह वर्ग आज के रचनाकारों का प्रमुख प्रेरणास्रोत बना हुआ है। यह निर्विवाद है कि हिन्दी उपन्यासों में जितना चित्रण इस वर्ग का हुआ है, उतना उच्च और निम्नवर्गीय जीवन का नहीं।[1]

मध्यवर्ग नागरजी के लेखन के केन्द्र में रहा है तथापि उनके प्रमुख उपन्यासों में सभी वर्गों के पात्र अपनी विभिन्न भूमिकाओं में उपलब्ध हैं। उनके उपन्यासों के प्रधान पात्र शहर के मध्यवर्गीय व्यक्ति होते हैं। ''नागरजी के पात्र जिस वर्ग के हैं, वे अपनी–अपनी वर्गीय प्रवृत्तियों तथा वर्गीय विशेषताओं के साथ ही उपन्यासों में दर्शन देते हैं। उच्चवर्गों के पात्रों में शोषण, एकाधिकार की भावना, स्वार्थ, छल–प्रपंच तथा अनैतिकता का प्राबल्य है। निम्नवर्गीय पात्र अधिकतर सामाजिक व्यवस्था से पीड़ित चित्रित किये गये हैं। नागरजी के अधिकांश पात्र मध्यवर्गीय पात्र हैं जिनमें मध्यवर्ग की अस्थिर मानसिक भूमिका को ही प्रस्तुत किया गया है।''[2]

प्रेमचन्द्र से पूर्व के जासूसी और तिलस्मी उपन्यासों में निम्नवर्गीय जीवन के दर्शन प्रायः नहीं के बराबर होते हैं। इस अभाव का प्रमुख कारण यह है कि यह समुदाय अशिक्षित था। अधिकार और अस्तित्त्व के प्रति

अनभिज्ञ यह वर्ग तत्कालीन रचनाकारों का प्रेरणा–स्रोत नहीं बन सकता था। इसके विपरीत उन लेखकों को जागरूक, सचेष्ट एवं सप्राण नायक की आवश्यकता थी, जो जनता में स्फूर्ति का संचार कर सकता। ''उस समय का श्रमजीवी इसमें सर्वथा असमर्थ था।''[3]

रूसी क्रांति के पश्चात् निम्नवर्ग जाग्रत हुआ और यह समुदाय भी आत्मविश्वास, आत्मगौरव एवं अधिकार रक्षा की तीव्र भावना से अनुप्राणित होने लगा। दूसरी और समाजवाद और मानववाद से प्रभावित लेखकों की सहानुभूति इस वर्ग को प्राप्त हुई। परिणामस्वरूप प्रेमचंद और उनके समकालीन अन्य उपन्यासकारों की कृतियों में निम्नवर्गीय जीवन का सर्वप्रथम दर्शन होता है। पूंजीवादी व्यवस्था की विकृतियों के उद्घाटन–क्रम में निम्नवर्गीय जीवन का चित्रण उपन्यासों के लिए अनिवार्य पक्ष बन जाता है।

पूंजीवादी व्यवस्था व्यक्ति–स्वार्थ को महत्व देती है जिससे मानवता के लिए संकट उपस्थित हो जाता है। पूंजीवादी व्यवस्था का दुष्परिणाम सबसे अधिक निम्नवर्ग को ही भोगना पड़ता है। इसी मानवतावादी समाजवाद से प्रेरित होकर नागरजी निम्नवर्गीय जीवन के चित्रण में प्रवृत होते हैं। नागरजी ने अपनी कृतियों में स्पष्ट किया है कि निम्नवर्गीय व्यक्ति अभावग्रस्त, शोषित, कुंठित और निराश जीवन जीने के लिए विवश होता है। अशिक्षा, अंधविश्वास, नियतिवादिता, परस्पर वैमनस्य उसके दयनीय जीवन के लिए उत्तरदायी हैं।

निम्नवर्गीय व्यक्ति साधनहीन और श्रमजीवी होता है। आज की पूंजीवादी व्यवस्था में निम्न–मध्यवर्गीय व्यक्ति भी श्रमजीवी वर्ग में मिलता जा रहा है। डॉ. कुसुम वार्ष्णेय के अनुसार इस वर्ग के अतिरिक्त ''दूसरी ओर श्रमजीवी होता है। आज की पूंजीवादी व्यवस्था में निम्न–मध्यवर्गीय व्यक्ति भी श्रमजीवी वर्ग में मिलता जा रहा है। डॉ. कुसुम वार्ष्णेय के अनुसार इस वर्ग के अतिरिक्त ''दूसरी ओर श्रमजीवी वे हैं जो जन्म से मजदूर हैं। इनके पास पूंजी के नाम पर आज के अतिरिक्त कल के लिए दो पैसे भी निकलने दुर्लभ हैं। यह समुदाय अपनी रोजाना की आय पर निर्भर है। यदि इसने आज श्रम नहीं किया ता कल भूखों मरने के लिए बाध्य होना पड़ता है।''[4] अपनी अभावमयता के कारण यह वर्ग अत्यन्त दयनीय जीवन व्यतीत करता है। जीवनावश्यक वस्तुओं के अभाव में उसका स्वास्थ्य भी चिन्तनीय होता है।

नागरजी के उपन्यास 'महाकाल' में मोनाई की दुकान के सम्मुख भूखी भीड़ खड़ी है। लेखक ने उसकी शारीरिक एवं आर्थिक स्थिति का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। ''मांस की पतली–पतली झिल्लियों में चमकती हुई खुदा की खुदाई डगमगाते हुए कदमों से डोल रही थी। गड्ढ़ों में धंसी डगर–डगर आँखें घूर–घूर कर अन्न के एक दाने की तलाश में मोनाई की दुकान के आस–पास मंडरा रही थी। कितने ही नर–कंकाल झुके हुए जमीन में चावल की सिर्फ एक कनी को खोज रहे थे। बेतरतीबी के साथ उनकी दाढ़ियाँ बढ़ी हुई थीं। औरतों के बाल अस्त–व्यस्त, तमाम जिस्म की नसें और हड्डियाँ चमक रही थी।''[5]

लेखक ने एक अन्य स्थल पर भीड़ की अस्वस्थता का जुगुप्सात्मक चित्र खींचा है – ''खाज के कारण खड़िया की तरह निकल आने वाली खुरदरी चमड़ी में पसलियों की लकीरें चमकती थीं। कइयों के हाथ–पैरों में सूजन आ गयी थी, शरीर में जगह–जगह से पानी रिसता था। गर्मी, सुजाक और खून की बीमारियों से सड़े हुए शरीर एक–दूसरे से रगड़ते, धक्कम–धुक्का करते थे।''[6]

लेखक ने स्पष्ट किया है कि इस वर्ग की चिन्ता का प्रमुख विषय भोजन है। जिसके प्रबंध में उसे कठिन संघर्ष करना पड़ता है। इस संघर्ष में उसकी शक्ति इतनी क्षीण हो जाती है कि शिक्षा, औषधि, वस्त्र, घर आदि की ओर प्रायः ध्यान ही नहीं जाता है।

विश्लेषण –

नागर ने अपने उपन्यासों में निम्नवर्ग की निराशाओं और कुंठाओं का सफल चित्रण किया है। उन्होंने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि निम्नवर्गीय कुंठा मूलतः अर्थजनित है। उदाहरण के लिए 'महाकाल' के किसानों का जीवन देखा जा सकता है। 'महाकाल' के किसान अनाज तो पैदा करते हैं किन्तु पैसे का दर्शन उन्हें नहीं होता। बारह रुपये मन के लोभ में अंधे होकर किसान अपना सब धान बेच देता है। इसके बाद फांकाकशी की स्थिति में पहुँच जाता है, यही हमारे देश के किसानों की नियति है। नागरजी के शब्दों में किसानों की निराशा साकार हो गयी हैं – ''दो तीन उपास करना या आधे–पेट रहकर जिन्दगी गुजार देना–इसकी आदत तो हमारे देश के हर किसान को होती है। पेट की ओर से तो वह प्रायः उदासीन हो चुका है।'' [7]

शोषित जीवन व्यतीत करते हुए 'महाकाल' के किसानों की निराशा अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गयी है। धान बेचने से प्राप्त पैसों का उपयोग भी किसान अपने लिए नहीं कर पाते हैं। मोनाई और दयाल जमींदार का कर्ज चुकता करने में ही उनके गहने–कपड़े तक बिक जाते हैं। जिन इच्छाओं की पूर्ति के लिए किसानों ने धान बेचा था, उन पर पानी फिर जाता है। किसानों, की इस शोषित स्थिति का नागरजी मार्मिक चित्रण करते हैं – ''चार दिन की चांदनी दिखाकर सुहागिनों के तन पर चमकते हुए सोने और चांदी के गहने उतर गये। ग्रामोफोन बजने बंद हो गये। पक्के मकान अब सुरग में बनेंगे। दस का माल दो में लुट गया।''[8]

शोषित, उपेक्षित, अपमानित जीवन और साधनहीनता के कारण निर्धन व्यक्ति चेतना–शून्यता की स्थिति को प्राप्त होता है। 'महाकाल' के वृंदावन के माध्यम से नागरजी इस वर्ग की चेतना–शून्यता को स्पष्ट करते हैं। वृंदावन दयाल जमींदार का नौकर है। शराब के नशे में दयाल और मिस्टर दास परस्पर झगड़ रहे हैं। मालिक और उनके दोस्त के विषय में वृंदावन कुछ सोच भी नहीं सकता। नागरजी लिखते हैं कि इस अवसर पर ''वह मूर्ति की तरह चुपचाप खड़ा था। उसका सिर झुका हुआ था। अदब से हाथ बांधे खड़ा था। उसे मालिक और उसके दोस्त की किसी जा–बेजा हरकत को देखने का अधिकार नहीं, उससे यह उम्मीद की जाती है कि ऐसे–ऐसे मौकों पर वह मालिक और उनके दोस्त की किसी भी अच्छी या बुरी बात को नहीं सुन रहा है। वह शून्य रहा। वह शून्य है, नौकर और कुछ भी नहीं।''[9]

निम्नवर्गीय व्यक्ति की उम्मीदें बहुत छोटी–छोटी होती हैं। उनकी अपूर्ति से वह निराश हो जाता है, आशाएं झूठी ही सही, दिखने पर वह प्रसन्न चित हो जाता है। निराशा के अंधेरे से मुक्ति पाने के लिए उसके मन में कितनी तड़प है, इसके लिए 'महाकाल' के किसानों का जीवन द्रष्टव्य है। अकाल–पीड़ित किसान जब सुनते हैं कि कंट्रोल भाव पर चावल मिलेगा तथा कुछ दिनों के बाद मुफ्त में चावल बांटा जायेगा तो वे खुशी से पागल हो जाते हैं। इस संदर्भ में नागरजी लिखते हैं– ''हमारे देश के किसान कितने सरल हृदय के हैं। उन्हें खुश करने के लिए सिर्फ बहाना ही काफी होता है। एक लंगोटी और मुट्ठी भर अन्न के सुखों की चाह है। उन्हें न मोटरें चाहिए और न महल।''[10]

'महाकाल' के किसान चावल बेचने पर रुपया पाते हैं। लक्ष्मी का सुख भोगना तो सदा से ही बड़े आदमियों के भाग में रहा है। इस बार बड़े भाग से माँ लक्ष्मी किसानों पर दया कर रही है– दुर्गा पूजा के अवसर पर।''[11] शोषण में निरंतर पिसते रहने तथा उसका विरोध करने में असमर्थ यह समुदाय जीवन के दुःखों को भाग्य की देन मान लेता है। उनके प्रति सहानुभूति रखने वाले नागरजी उनकी इस भाग्यवादी प्रवृत्ति पर प्रहार करके भाग्यवाद के खोखल से निकालने का प्रयास करते हैं। इस समुदाय के जीवन के दुःखों के मूल कारण शोषण का उल्लेख कर नागरजी ने उसका विरोध करने के लिए उन्हें प्रेरित किया है।

'महाकाल' में मुनीर की बीबी अंधविश्वासी है। भूख से टूटी उस स्त्री को नुरूद्दीन एक अनोखी कहानी सुनाता है। जिसमें खुदा के बन्दे को एक भूत भरपेट खाना देता है। भूतों की भसजिद में वह एक शाम को नमाज पढ़कर बाहर निकलता है तो सीढ़ी पर एके केले के पत्ते पर भात और भूनी हुई मछलियाँ रखी पाता है। वह भूखा है मगर भूतों का डर भी है, तभी एक आवाज सुनाई देती है– ''ऐ खुदा के बन्दे, ये तेरे ही वास्ते है। ढ़ाई सौ बरस के बाद तू ही एक ऐसा इन्सान मिला जिसने खुदा के खौफ को हमसे बड़ा माना। आज दुनिया में अज़ाब बढ़ गया है। दुनिया खुदा को भुला बैठी है। मगर जो खुदा को नहीं भुलाता, उसको खुदा प्यार करता है। ले, खा ले। ..... तुझे यहाँ रोज खाना मिलेगा।''[12] नूरुद्दीन की बातों पर विश्वास करके मुनीर की बीबी अपनी आबरू लुटा देती है।

नागरजी ने 'महाकाल' के पांचू और उसकी माँ को आबरू के लिए अत्यन्त चिन्तित दिखाया है। डॉ. सुषमा धवन के अनुसार, ''पांचू गोपाल का जीवन मध्यवर्गीय समाज की लोक–लाज भावना से परिचालित होता है।''[13] बंगाल के साथ–साथ उसके घर में अकाल आया है, लेकिन पार्वती माँ निश्चिन्तावस्था का अभिनय करने में प्राण–पण से लगी हैं। वह प्रकट करना चाहती हैं कि उनके घर में अकाल नहीं आया है।

अकाल छिपाने के संबंध में वह कहती हैं– ''चाहे जो हो, पर आबरू तो संभालनी ही पड़ती है न। भगवान ने यही तो छोटे लोगों में फरक रखा है। नहीं तो हम लोग भी उसी तरह गली–गली, गांव–गांव भीख न मांगते होते है, लूट–मार न करते होते। भला आबरू के बंधन भी कहीं छूटते हैं? कुलीनों की आबरू तो चिता तक साथ जाती है। ..... नंगे की दो टांगे उघाड़ी, तब भी वह किसी तरह लाज तो समेटता ही है। पर

आर्थिक विवशता में उनकी आबरू बच नहीं पाती, पुरानी धोती के हजार पैबंदों की तरह कुलीनों की आबरू भी अब अपनी असलियत, लाख कोशिश करने पर भी, छिपा नहीं पाती।''[14]

परिवार के सभी लोग चार–पाँच दिन से भूखे है। पांचू प्रतिदिन साढ़े चार–पांच बजे तक दयाल बाबू के यहाँ पढ़ाने जाया करता है। एक दिन दयाल बाबू के यहां से उसे चावल मिलने वाला था। उसके पास करने के लिए कोई काम नहीं था, फिर भी वह दयाल के यहाँ साढ़े चार–पांच से पहले नहीं जायेगा ''नहीं, अभी जाना ठीक नहीं। तब सो साफ खुल जायेगा कि चावल के लिए इतनी जल्दी की गयी है। मगर यह कोई झूठ बात थोड़ी है। हॉ, आबरू का सवाल–जरूर है। आबरू चली गयी तो लाख का आदमी खाक का।''[15] माँ की भाँति पांचू भी अपनी आर्थिक दयनीयता को छिपाता है। हारान भट्टाचार्य ने अपने अहं की रक्षा बड़े हास्यास्पद रूप से की है। घर के दरवाजे बंद रखने पर भी उसे बराबर यही शक बना रहता है कि दुनिया वालों को उसके यहाँ अकाल आने की खबर लग गयी है। यह चीज उसे बराबर परेशान करती रहती है। तीसरे दिन उसे एक उपाय सूझता है। ''घर से बाहर निकलता है और लोगों से जाहिर करता है कि उसे बदहज्मी हो गयी है और वह बांडुज्ये मोशाय के यहाँ चूरन लेने जा रहा है।''[16] स्कूल में जलते हुए अनाज के बोरों पर निम्नवर्गीय लोग टूट पड़ते हैं लेकिन ''आबरूदार जरा दूर, जगह–जगह टोलियों में खड़े देख रहे हैं। मौका पाकर चावल भी चुरा लाते हैं।''[17]

नागर ने निम्न–मध्यवर्गीय पांचू, पार्वती माँ, हारान भट्टाचार्य को बिडम्बनाओं का शिकार दिखाया है। अपनी सामाजिक–स्थिति बनाये रखने के लिए इन सभी को प्रदर्शन करने की अनिवार्य बाध्यता स्वीकारनी पड़ती है। अपने आंतरिक खोखलेपन को अत्यन्त कृत्रिम ढंग से नकारना होता है। इन सभी की जिन्दगियां दिखावे और झूठलावे की जिन्दगियां हैं, जिनका न कोई अर्थ है, न कोई अस्तित्व।

'महाकाल' के तुलसी और गोपाल का पारस्परिक मिलन और आकर्षण मध्यवर्गीय नैतिकता की दृष्टि से अनुचित है। तुलसी की माँ और भाभी उस पर कड़ी नजर रखती हैं। तुलसी पुनः गोपाल के घर जाने लगती है तो दीनू और परेश उसके साथ कर दिये जाते हैं जिससे वह गोपाल से स्वच्छन्दतापूर्वक मिल न सके। आर्थिक अभाव से तुलसी के विवाह में विलम्ब होने से लेखक ने पार्वती माँ को चिंतित दिखाया है– ''तुलसी अब सोलह बरस की हो गयी है। इसकी पहाड़–सी उमर कब तक दुनिया की आंखों से छिपाती रहूंगी।''[18] इस समुदाय के व्यक्ति में रूढ़ नैतिकता का विरोध करने के साहस का प्रायः अभाव होता है। पांचू गोपाल भूखे परिवार के लिए दयाल के यहां से पांच सेर चावल ला रहा था। चावल की गठरी मूर्दे से छू जाने पर छोड़कर चला जाता है। नागरजी व्यंग्य करते हुए लिखते हैं– ''पांचू जैसा प्रतिष्ठित कुल का ब्राह्मण मुसलमान मुर्दे के स्पर्श से अपवित्र चावल चार लोगों की जानकारी में कैसे ले जा सकता है। धर्म और जाति जायेगी, आबरू जायेगी।''[19] रूढ़ नैतिकता के पालन में कानाई घटक की स्थिति अत्यन्त दयनीय बन गयी है। इस दयनीय स्थिति के चित्रण से स्पष्ट है कि ऐसी नैतिकता के प्रति लेखक की सहानुभूति नहीं है। कानाई घटक के बाप मर गये। मृत पिता का श्राद्ध करना पुत्र की नैतिक जिम्मेदारी होती है। अतः कानाई ने दयाल के समृद्ध गुमाश्ते परान हालदार से पत्नी का सौदा तय किया और झूठी नैतिकता के लिए उसने अपनी पत्नी को जबर्दस्ती वेश्या बनने पर विवश किया।

'महाकाल' उपन्यास का पांचू अपनी विकट आर्थिक परिस्थितियों में फंसकर स्वाभिमान की रक्षा करने में असमर्थ हो जाता है। दयाल जमींदार मोनाई का पानी उसके दरवाजे पर उतारते हैं। दयाल की बगल में बैठा पांचू उनके बराबर होने का गर्व करता है किन्तु शीघ्र ही अपनी आर्थिक स्थिति पर ध्यान जाते ही वह कुंठित हो जाता है– ''इन हारने वाले और हराने वाले और हराने वाले दो पूँजीशाहों के सामने उसकी हस्ती ही क्या है? चाहने पर पल भर में दयाल दमींदार उसका भी पानी इसी तरह खड़े–खड़े उतार सकता है। चाहने पर मोनाई भी उसे लपेटकर दस मार सकता है। और पांचू चाहने पर भी इन दोनों में से किसी को कुछ भी नहीं कह सकता।''[20] वह मोनाई के हाथ स्कूल के फर्नीचर बेच चुका है, इसलिए मोनाई के सामने भी वह सिर उठाने के योग्य नहीं रहा है।

आर्थिक जटिलता मध्यवर्गीय व्यक्ति के संघर्ष की प्रवृत्ति को कुंठित कर उसे भाग्यवादी बना देती है। शिबू और उसकी माँ की ऐसी ही स्थिति है। जीवन में प्राप्त असफलता ने शिबू को अकर्मण्य बना दिया है। सम्पन्न बनने की उसकी प्रबल इच्छा है। इसके लिए वह जुए का सहारा लेता है। जुए में तुलसी के ब्याह के लिए बने और अपनी पत्नी के सारे गहने हार जाता है। पार्वती माँ अपना दुःख प्रकट करते हुए पांचू को पत्र लिखती हैं– ''अब तो वह अपने मन का हो गया है भैया। क्या करूं, जो लिखा के लाई हूँ वह भोगना ही

पड़ेगा। ..... नहीं जानती और क्या–क्या देखना बदा है।''[21] यहाँ नागरजी ने पांचू और उसके परिवार की कुंठा के मूल में आर्थिक पराजय को निरूपित किया है।

'महाकाल' उपन्यास का पांचू पूंजीपतियों की शोषण नीति से असंतुष्ट है। उसकी दृष्टि में बंगाल का अकाल पूंजीवादी शोषण नीतियों का ही परिणाम है। उसके स्कूल के एक छात्र–गणेश की मृत्यु से उसके मन को गहरा आघात पहुंचा है– ''उसे लगा जैसे कि आज उसका स्कूल मर गया। चार दिनों के अटूट उपवास और काले भविष्य की चिन्ता भी जो आघात उसे न पहुंचा सकी थी, वह सहसा गणेश की मरने की खबर से उसे पहुंची थी।''[22]

मुखौटाधारी – 'महाकाल के मिस्टर दास यूनियन बोर्ड के सेक्रेटरी हैं। उपन्यास में उसका चरित्र निंदनीय है। जनता का चावल वह दस रुपये के बदले पंद्रह में मोनाई के हाथ बेचता है, मोनाई से दो सौ बोरे चावल तथा सौ औरतों की रिश्वत लेता है, दूसरी ओर जनता के प्रति झूठी सहानुभूति व्यक्त करके देश–प्रेमी और मानवतावादी होने का नाटक रचता है। बातचीत में वह प्रकट करता है कि देश की भुखमरी, गुलामी और पूंजीवादी शोषण नीति को देखकर उसका हृदय व्यथित है। गरीबों की दुर्दशा के प्रति वह आहें भरता है– ''हाय हमारा प्यारा भारतवर्ष। हमारा बंगदेश, क्या दुर्दशा हो गयी है हमारी। जिस पवित्र भूमि पर दूध, घी की नदियां बहा करती थीं, वहीं अब अन्न के एक–एक दाने के लिए लोग मोहताज हैं।''[23]

विलासिता तथा स्वैराचारिता सामन्तों–जमींदारों की प्रमुख चारित्रिक विशेषता रही है। उपन्यासकार की दृष्टि इस ओर भी गयी है। 'महाकाल' में दयाल बाबू के शीशमहल में शराब का दौर चल रहा है। दयाल और मिस्टर दास के साथ पांचू भी उस गुनाह में सम्मिलित है। दयाल अपने चरित्र की गंदगी उगलते हैं– ''मास्टर, चार–चार अ–अ औरते ..... समझे? दो बोतल ब्हिस्की पी के ..... बट ..... नेव्हर डाउन क्या समझे?'' शराब का दौर चल ही रहा था कि मोनाई द्वारा भेजी गयी दो औरते आती हैं– मुनीर की विधवा और कालीराय की पत्नी। दयाल और मिस्टर दास ने उनके साथ मुह काला किया।''[24]

अमृतलाल नागरजी के उपन्यासों में ऐसे उच्च वर्गीय पात्र भी मिलते हैं जो मंच पर सामाजिक, राजनीतिक हित का नारा लगाते हैं, समाज–सेवी का मुखौटा पहनते हैं, किन्तु इस सेवा भावना के मूल में उनका स्वार्थ ही निहित होता है। उच्च वर्ग सम्बन्धी ये घोषणाएँ नागर जी के उपन्यासों में प्रस्तुत पात्रों के क्रिया–कलापों से पुष्ट की जा सकती है। 'महाकाल' के दयाल बाबू मोनाई को भूखी जनता में चावल और दवा बाँटने के लिए विवश करते हैं। उन्हें विश्वास है कि इस कार्य में उन्हें इतिहास में स्थान मिलेगा, अखबारों में उनका नाम छपेगा और दुनिया उन्हें एक महान जमींदार के रूप में मानेगी। नाम होने लगे तो बस सीधे पोलिटिक्स में नेता बन जाऊँगा। ..... इस बार चुनाव हो तो उसमें भी खड़ा हो जाऊँगा, हिन्दू महासभा के टिकट पर खड़ा हो जाऊँगा। कांग्रेस के टिकट पर भी खड़ा हो सकता हूँ। मगर उसमें जेल जाना पड़ता है। ..... हिन्दू महासभा ही ठीक है। ''नाम का नाम होगा और परम पवित्र सनातन धर्म की रक्षा भी होती रहेगी।''[25] अखबारों में अपने सेवा–कार्य पर लेख लिखाने के लिए वह मास्टर पांचू को चुनते हैं। कितना हास्यास्पद है उनका समाजसेवी रूप। एक ओर भूखी भीड़ पर गोलियाँ चलवाते हैं, दूसरी ओर मोनाई से उन्हें दवा और चावल दिलाते हैं।

'महाकाल' के दयाल जमींदार और गौरीपुर के नवाब के आवास गरीब प्रजा के शोषण से बने हैं। इन दोनों के चरित्र में सामान्तवादी ह्रासशील मनोवृत्तियां मुखर हुई हैं। नागरजी ने इनके आवासों का व्यंग्यात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। गौरीपुर के नवाब ने अंग्रेजी ढंग का मेहमान खाना बनवाया था। दयाल उसकी टक्कर में शानदार शीशमहल के बड़े हाल में घुसते ही दाहिनी तरफ एक बनावटी झरना और उसके साथ ही लगा हुआ फव्वारा है। बनावटी झरने को रंगीन बनाने के लिए जगह–जगह बल्बों की व्यवस्था की गयी है। बीच–बीच में कद्दे आदम आइने लगे हुए हैं। झाड़–फानूस और कीमती फारसी कालीनों से हाल सजाया गया है। आधे हाल को घेरे हुए दो फुट ऊँचा गद्दा पड़ा है जिस पर रेशमी चांदनी बिछी हुई है। अनेक तरह के संगीत–यंत्र हैं। शराब के लिए दो कीमती मेजें हैं। हाल के चारों कोनों में शीशम के खूबसूरत स्टैण्डों पर विभिन्न मुद्राओं में नग्न नारी–मूर्तियां रखी हुई हैं। महल की भव्यता के विषय में दयाल पांचू से कहते हैं– 'देखकर तुम भी कहोगे कि हां किसी रईस का विलास भवन देखा।' इस महल में वह हिन्दुस्तानी नाच–गानों की महफिलें करवाता है।''[26]

निष्कर्ष –

निष्कर्षतः अमृतलाल नागर के भूख (महाकाल) उपन्यास में कहानी जनवादी चेतना के पृष्ठभूमि से उभरती है। इस परिप्रेक्ष्य में वे प्रतिगामी रूढ़ियों तथा भ्रान्तिपूर्ण परम्पराओं को त्याग देने की प्रेरणा देते हैं। लोक सेवी और जनवादी उदात्त दृष्टिकोण वाले साधु–सन्यासियों के द्वारा कथाकार नागर जी ने शोषित पीड़ित मानवता को आस्था का सम्बल प्रदान किया है।

संदर्भ –

[1] डॉ. नामवर सिंह – आधुनिक हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, पृष्ठ 106
[2] प्रकाशचंद मिश्र – अमृतलाल नागर का उपन्यास साहित्य, पृष्ठ 253
[3] डॉ. कुसुम वार्ष्णेय – हिन्दी उपन्यासों में नायक, पृष्ठ 125
[4] डॉ. कुसुम वार्ष्णेय – हिन्दी उपन्यासों में नायक, पृष्ठ 125
[5] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 68
[6] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 102
[7] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 26
[8] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 28
[9] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 156
[10] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 90
[11] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 27
[12] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 72
[13] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 168
[14] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 168
[15] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 33
[16] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 98
[17] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 168
[18] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 37
[19] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 78
[20] अमृतलाल नागर – महाकाल, ष्ठ 133
[21] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 35
[22] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 9
[23] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 158–159
[24] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 132
[25] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 130
[26] अमृतलाल नागर – महाकाल, पृष्ठ 140, 148, 149